हरियाणा राज्य

बनाम

हसमत

26 जुलाई 2004

अरिजीत पसायत एवं सी.के. ठक्कर, जे.जे.

दंड प्रक्रिया संहिता 1973

धारा 389- सजा का निलंबन और जमानत प्रदान करना - अभियुक्त को भा0 दं0 सं0 की धारा 302 के तहत दोषी ठहराया गया - अपील के लंबित रहते अभियुक्त के धारा 389 के आवेदन पर उच्च न्यायालय द्वारा यह देखते हुए की दोष सिद्धि के बाद अभियुक्त को पैरोल प्रदान की गई थी और उसने पैरोल का दुरुपयोग नहीं किया था, उसे जमानत पर रिहा किया गया। यह निर्णीत किया गया कि - अपीलीय न्यायालय यह निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिए और उन कारणों को लिखने के लिए प्रतिबद्ध है जिससे यह निष्कर्ष निकलता हो कि प्रकरण में सजा का निलंबन व जमानत दिया जाना वांछनीय है। उच्च न्यायालय का आदेश उक्त आवश्यक अवयवों की पूर्ति नहीं करता है। अपेक्षित आदेश निरस्त किया जाता है। प्रत्यर्थी अभियुक्त को अन्य अभियुक्तगण के साथ अंतर्गत धारा 302 सपठित धारा 149 भा0 दं0 सं0 में दोष सिद्धि होने पर आजीवन कारावास से दंडित किया गया। उच्च न्यायालय में दायर अपील में उसके द्वारा एक

प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 389 दंड प्रक्रिया संहिता सजा के निलंबन एवं जमानत प्रदान करने हेतु दायर किया गया। उच्च न्यायालय द्वारा यह विचार व्यक्त करते हुए की दोष सिद्धि उपरांत अभियुक्त को दी गई पैरोल का उसके द्वारा दुरुपयोग नहीं किया गया है, जमानत प्रदान की गई।

राज्य सरकार की ओर से यह पक्ष रखा गया की प्रत्यर्थी अभियुक्त एक वीभत्स हत्या में प्रमुख व्यक्ति था और उसे पैरोल प्रदान की गई थी, यह धारा 389 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत सजा के निलंबन और जमानत का आधार नहीं हो सकता है।

अपील का निस्तारण करते हुए न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि:-

सजा के निलंबन किए जाने में तथा जमानत दिए जाने में अंतर है। धारा 389 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के तहत अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील किए गए दंडादेश या आदेश के निष्पादन के निलंबन का आदेश देने के लिए लिखित रूप से कारण दर्ज करना, आवश्यक अवयवों में से एक है। अपीलीय न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह वस्तुनिष्ठ रूप से मामले का आकलन करें और निष्कर्ष के कारणों को दर्ज करें कि किस प्रकार से प्रकरण में सजा के निष्पादन का निलंबन और जमानत दिया जाना न्यायसंगत है। ऐसा प्रतीत होता है की सजा के निलंबन और जमानत देने का निर्देश देने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा एक मात्र कारण अभियुक्त को

पैरोल दिए जाने की अवधि में, उस द्वारा स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं किया जाना है यह अपने आप में सजा के निष्पादन के निलंबन एवं जमानत दिए जाने को न्याय उचित नहीं बनाता है। उच्च न्यायालय का आदेश उक्त आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता है, और निरस्त किया जाता है।

विनय कुमार बनाम नरेंद्र व अन्य (2002) 9 एस.एस.सी. 364 एवं रामजी पासद बनाम रतन कुमार जयसवाल व अन्य (2002) 9 एस.एस.सी. 366 पर निर्भरता की गई।

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 715-617/2004

पंजाब व हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा 2004 आपराधिक अपील संख्या 100 (खंडपीठ)/2002 में आपराधिक विविध प्रार्थना पत्र संख्या 14009-10/2003 में पारित आदेश दिनांक 12/5/2003 के विरुद्ध।

अपीलार्थी की ओर से- सुंदर खत्री एवं विजय कुमार गर्ग

प्रत्यर्थी की ओर से- जाफर सादिक एवं बलराज दीवान

इस न्यायालय का निर्णय अरिजीत पसायत न्यायमूर्ति द्वारा प्रदान किया गया -

स्वीकृति प्रदान की गई

हरियाणा राज्य की ओर से पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा आरोपी हसमत (यहां प्रत्यर्थी) को जमानत देने पर आपत्ति उठाई गयी है। आपराधिक अपील संख्या 100/2002 में आपराधिक विविध संख्या 14069/2003 में कथित तौर पर दंड प्रक्रिया संहिता,1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 389 के तहत इस प्रार्थना के साथ दायर की गई थी कि मूल सजा यानी आजीवन कारावास और जुर्माना रुपये 10,000/- को निलंबित किया जाना चाहिए और दायर अपील की लंबित अवधि के दौरान प्रत्यर्थी को जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए। आरोपी- प्रत्यर्थी को बाईस अन्य लोगों के साथ धारा 148, 302, 307, 324 सहपठित धारा 149 (भारतीय दंड संहिता) के तहत दंडनीय अपराधों के कृत्य के लिए न्यायालय द्वारा विचारण किया गया। भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भा0 दं0 सं0') और शस्त्र अधिनियम, 1959 की धारा 25 और 27 (संक्षेप में 'शस्त्र अधि0')। आरोपी-प्रत्यर्थी को कुछ अन्य लोगों के साथ धारा 302, 307, 148 सह पठित धारा 149 भा0 दं0 सं0 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया। उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सपठित धारा 149 के तहत दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास की सजा और उपरोक्त जुर्माने का भुगतान करने की सजा सुनाई गई।

उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में मुख्य रूप से इस आधार पर जमानत प्रदान की गयी है कि दोष सिद्धि के बाद आरोपी प्रत्यर्थी को तीन

मौकों पर पैरोल दी गई थी और पैरोल की अवधि के दौरान स्वतंत्रता के दुरुपयोग का कोई आरोप नहीं था।

अपीलकर्ता-राज्य के विद्वान वकील के अनुसार प्रत्यर्थी वीभत्स हत्या में मुख्य आरोपी था और उसके द्वारा अपराध को अंजाम देने के प्रत्यक्ष और निर्विवाद सबूत थे। विचारण न्यायालय द्वारा एक विस्तृत और तर्कसंगत निर्णय द्वारा उसे दोषी ठहराया गया है और उपरोक्त अनुसार सजा सुनाई है। केवल इसलिए कि पैरोल दी गई थी, संहिता की धारा 389 के संदर्भ में सजा को निलंबित करने और जमानत देने के लिए पैरोल प्रदान की गयी थी, आधार नहीं हो सकता है।

इसके विपरीत, आरोपी-प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि पैरोल अवधि के दौरान स्वतंत्रता के दुरुपयोग का कोई आरोप नहीं था। उच्च न्यायालय द्वारा आरोपी प्रत्यर्थी को जमानत देना उचित था। यह कोई ऐसा उचित प्रकरण नहीं है जिसमें भारत के संविधान, 1950 (संक्षेप में 'संविधान') के अनुच्छेद 136 के संदर्भ में हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

संहिता की धारा 389 अपील लंबित रहने तक सजा के निष्पादन को निलंबित करने और अपीलकर्ता को जमानत पर रिहा करने से संबंधित है। जमानत और सजा के निलंबन के बीच अंतर है। धारा 389 के अंतर्गत आवश्यक आधारों में से एक यह है कि अपीलीय न्यायालय को सजा या अपील किए गए आदेश के निष्पादन को निलंबित करने का आदेश देने के

लिए लिखित रूप में कारण दर्ज करने की आवश्यकता है। यदि वह कारावास में है, तो उक्त न्यायालय यह निर्देश दे सकता है कि उसे जमानत पर या अपने स्वयं के मुचलके पर रिहा कर दिया जाए। कारणों को लिखित रूप में दर्ज करने की आवश्यकता स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि प्रासंगिक पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए और सजा को निलंबित करने और जमानत देने का निर्देश देने वाला आदेश सामान्य मामले के रूप में पारित नहीं किया जाना चाहिए।

अपीलीय न्यायालय मामले का निष्पक्ष मूल्यांकन करने और इस निष्कर्ष के लिए कारण दर्ज करने के लिए बाध्य है कि मामले में सजा के निष्पादन को निलंबित करने और जमानत देने की आवश्यकता है। मौजूदा मामले में, सजा को निलंबित करने और जमानत देने का निर्देश देने के लिए उच्च न्यायालय ने जिस एकमात्र कारक को महत्व दिया है, वह आरोपी- प्रत्यर्थी को पैरोल दिए जाने की अवधि के दौरान स्वतंत्रता के दुरुपयोग के आरोप का अभाव है।

विद्वान सत्र न्यायाधीश, गुड़गांव ने दिनांक 24.10.2001 के एक निर्णय द्वारा आरोपी प्रत्यर्थी को दोषी पाया था। प्रत्यर्थी द्वारा आपराधिक अपील संख्या 100 (खंडपीठ)/2002 दायर की गई थी। यह तथ्य कि अपील के लंबित रहने के दौरान आरोपी प्रत्यर्थी पैरोल पर था, यह दर्शाता है कि शुरुआत में आरोपी प्रत्यर्थी को सजा के निष्पादन के निलंबन का

लाभ नहीं दिया गया था। केवल यह तथ्य कि पैरोल की अवधि के दौरान आरोपी ने स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं किया है, सजा के निष्पादन और जमानत के निलंबन का न्यायसंगत आधार नहीं है। उच्च न्यायालय द्वारा वास्तव में इस पर विचार करना आवश्यक था कि क्या सजा के निष्पादन को निलंबित करने और उसके बाद जमानत देने के कारण मौजूद थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने सही सिद्धांत को ध्यान में नहीं रखा है।

विजय कुमार बनाम नरेंद्र और अन्य, [2002] 9 एस.सी.सी. 364 और रामजी पसाद बनाम रतन कुमार जयसवाल और अन्य, [2002] 9 एस.सी.सी. 366 में, इस न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि धारा 302 आईपीसी के तहत सजा से जुड़े मामलों में, केवल असाधारण मामलों में ही सजा के निलंबन का लाभ दिया जा सकता है। उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश उक्त आवश्यकता को पूरा नहीं करता है। विजय कुमार के मामले (पूर्व लिखित) में यह माना गया कि धारा 302 के तहत दंडनीय हत्या जैसे गंभीर अपराध से जुड़े मामले में जमानत की प्रार्थना पर विचार करते समय दंड प्रक्रिया संहिता के अनुसार, अदालत को प्रासंगिक कारकों पर विचार करना चाहिए जैसे कि आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोप की प्रकृति, जिस तरह से अपराध किया गया है, अपराध की गंभीरता और आरोपी को हत्या के गंभीर अपराध करने के लिए दोषी ठहराया जाने के उपरांत जमानत पर रिहा करने की वांछनीयता उच्च न्यायालय द्वारा

आक्षेपित आदेश पारित करते समय इन पहलुओं पर विचार नहीं किया गया है।

सजा को निलंबित करने और जमानत देने का निर्देश देने वाला आदेश स्पष्ट रूप से अस्थिर है और इसे निरस्त किया जाता है। इसलिए, हम आदेश को निरस्त करते है। आरोपी- प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने कहा कि एक नया आवेदन दायर किया जाएगा। यदि ऐसा किया जाता है, तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि उच्च न्यायालय इस मामले पर कानून के अनुसार, उचित परिप्रेक्ष्य में विचार करेगा। हम उस संबंध में कोई राय व्यक्त नहीं करते,

प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने पुरजोर आग्रह किया कि यद्यपि सजा के निष्पादन को निलंबित करने और जमानत देने के लिए आवेदन पत्र अन्य कई आधारों पर भी दायर किया गया था न कि केवल पैरोल की अवधि के दौरान प्रदत्त स्वतंत्रता के दुरूपयोग न करने के कारण और न केवल पैरोल की अवधि के दौरान स्वतंत्रता के दुरुपयोग की अनुपस्थिति थी, उच्च न्यायालय ने उन पहलुओं को नहीं छुआ है।

तदनुसार अपीलों का निपटारा किया जाता है।

अपीले निपटाई गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी हरिओम शर्मा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।